जुलाई २०१६

कीमत ₹ १२/-

दादा भगवान परिवार का

अक्रम एक्सप्रेस

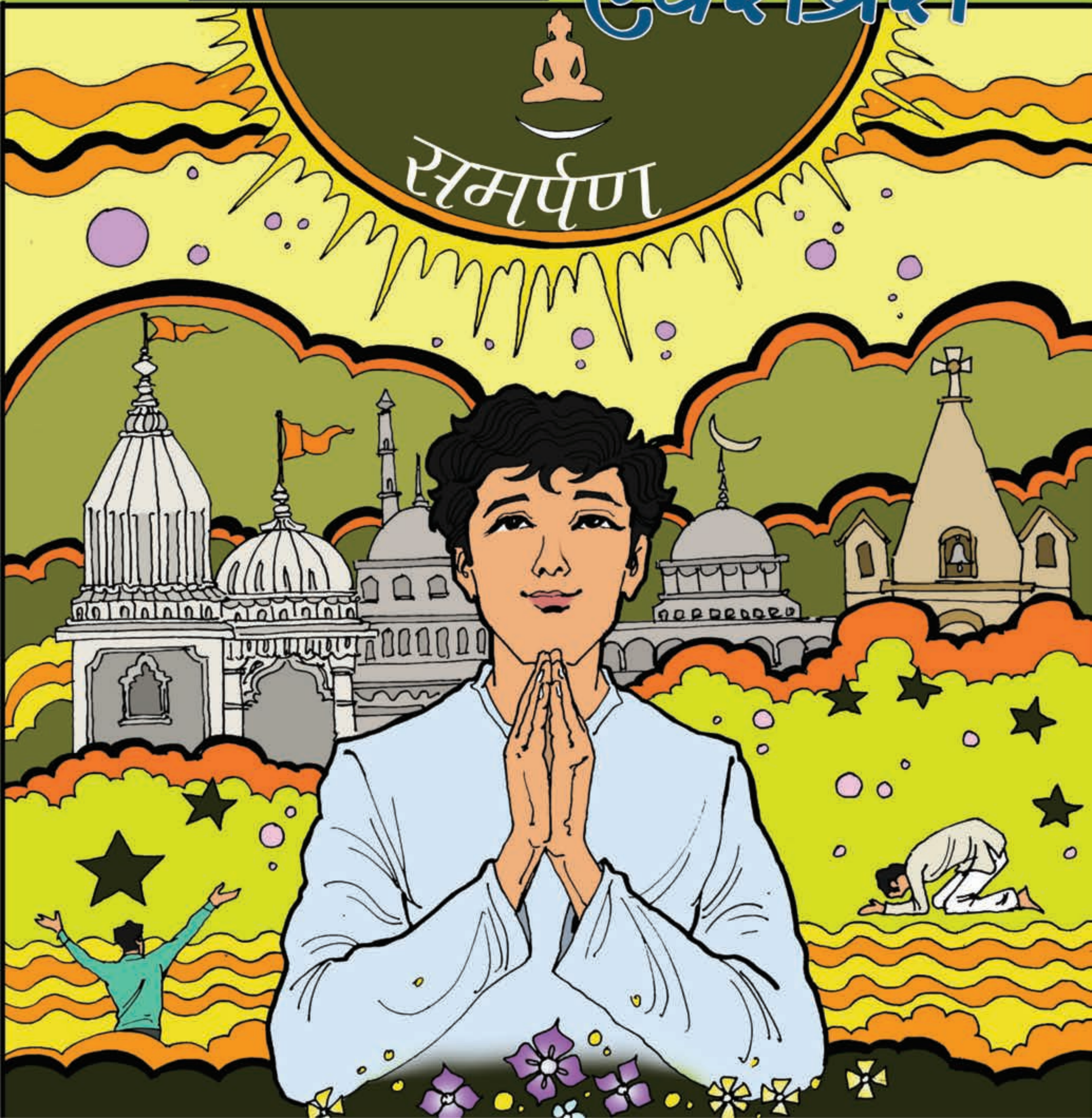

समर्पण

संपादकीय

बालमित्रों,

समर्पण शब्द आपके लिए शायद नया और समझने में कठिन हो सकता है, ठीक है न? सरल भाषा में कहें तो समर्पण यानी जिसे समर्पण किया हो उनके ऊपर संपूर्ण विश्वास। वे जो कहें, जो करें, उसमें खुद की बुद्धि का ज़रा सा इस्तेमाल भी न करे और पूरी श्रद्धा के साथ कहे अनुसार करे, उसे समर्पण कहते हैं।

तो आइए, इस अंक में हम समर्पण के बारे में विस्तार से समझें। उसका महत्व जानकर हम भी भगवान को या गुरू को संपूर्ण समर्पित हो जाएँ।

- डिम्पल मेहता

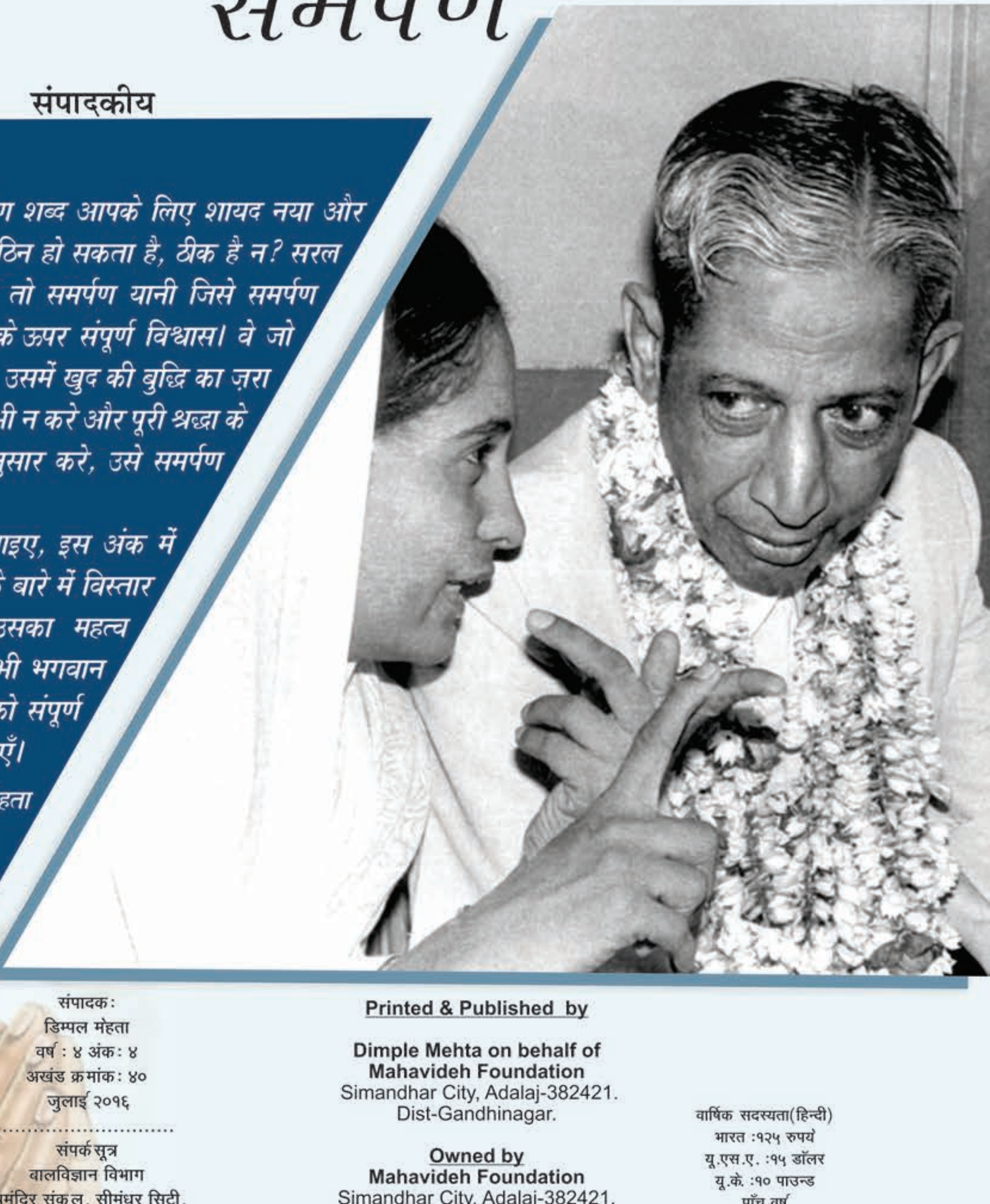

संपादक:
डिम्पल मेहता
वर्ष : ४ अंक : ४
अखंड क्रमांक : ४०
जुलाई २०१६

संपर्क सूत्र
बालविज्ञान विभाग
त्रिमंदिर संकुल, सीमंधर सिटी,
अहमदाबाद - कलोल हाइवे,
मु.पो. - अडालज,
जिला . गांधीनगर - ३८२४२१, गुजरात
फोन : (०७९) ३९८३०१००
email:akramexpress@dadabhagwan.org
Website: kids.dadabhagwan.org

Printed & Published by

Dimple Mehta on behalf of
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj-382421.
Dist-Gandhinagar.

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj-382421.
Dist-Gandhinagar.

Printed at
Amba Offset
Basement, Parshvanath Chambers, Nr.RBI,
Usmanpura, Ahmedabad-14.

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj-382421.
Dist-Gandhinagar.

वार्षिक सदस्यता(हिन्दी)
भारत :१२५ रुपये
यू.एस.ए. :१५ डॉलर
यू.के. :१० पाउन्ड
पाँच वर्ष
भारत : ५०० रुपये
यू.एस.ए. : ६० डॉलर
यू.के. : ४० पाउन्ड
D.D/ M.O 'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम पर भेजें।

दादाजी कहते हैं...

प्रश्नकर्ता : भगवान को सबकुछ समर्पित कर देना यही सुखी होने का सच्चा मार्ग है?

दादाश्री : हाँ, लेकिन इस दुनिया में भगवान को समर्पित होकर कोई रहा नहीं है! मुँह पर ज़रूर बोलते हैं कि भगवान को समर्पण! लेकिन अधिकतर तो पत्नी को समर्पित होते हैं! व्यवहार में बोलते हैं कि भगवान को समर्पण किया है, भक्ति करते समय भगवान को समर्पित है, ऐसा बोलते हैं लेकिन जहाँ समर्पण है वहाँ दुःख कैसा?

सद्गुरु को सबकुछ समर्पण!

प्रश्नकर्ता : केवल सद्गुरु के लिए ही भक्ति होनी चाहिए, यही कहना चाहते हैं न?

दादाश्री : सभी तरह की अर्पणता होनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : सद्गुरु के प्रति संपूर्ण समर्पण भाव रहे तो?

दादाश्री : तो काम हो जाए। समर्पण भाव हो तो सारे काम हो जाएँ। फिर कुछ बाकी रहे ही नहीं लेकिन मन-वचन-काया से समर्पण होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : ऐसा समर्पण तो यदि कृष्ण भगवान या महावीर भगवान के समकक्ष हों तभी समर्थ कहा जाएगा न? या फिर किसी भी साधारण को करें तो भी चलेगा?

दादाश्री : यह तो, यदि आपको वे विराट पुरुष लगें तो करना चाहिए। आपको लगे कि ये महापुरुष हैं और उनके कार्य सभी विराट लगें तो आपको उन्हें समर्पण करना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : हज़ारों साल पहले जो महापुरुष हो गए हैं, उन्हें हम समर्पण करें, तो उसे समर्पण किया कहा जाएगा? उससे हमारा विकास होगा? या प्रत्यक्ष महापुरुष ही होने चाहिए?

दादाश्री : परोक्ष से भी विकास होता है और प्रत्यक्ष मिल जाएँ फिर तो कल्याण ही हो जाए। परोक्ष से विकास रूपी फल मिलता है और प्रत्यक्ष के बिना कल्याण ही नहीं है।

समर्पण भाव होना ही भक्ति है। ज्ञान पूर्वक समर्पण तो बहुत ही ऊँची भक्ति है। अज्ञान पूर्वक समर्पण किया हो फिर भी भक्ति कही जाएगी।

ज्ञानी पुरुष का जो हो वही मेरा भी हो - उसे समर्पण भाव कहते हैं। यानी अपना, खुद का पल्ला उनसे छूटने नहीं देना है, जुड़ा हुआ ही रखना है, छोड़ोगे तो उल्टा गिरोगे न? इसलिए ज्ञानी के साथ ही अपना पल्ला जुड़ा हुआ रखना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : भक्ति मार्ग में ज़िम्मेदारी किस पर होती है, भगवान पर?

दादाश्री : हाँ, सच्चा भक्त कब कहा जाएगा, एक भी संकल्प-विकल्प न करे तब।

वह क्या कहता है, संकल्प-विकल्प भगवान करें। सबकुछ भगवान पर छोड़ देता है। जबकि ये तो लड़के की शादी करनी है, तो शादी करवाता है। जन्म होता है तब पेड़े बाँटता है, लड़का मर जाए तब भगवान ने मार दिया कहेगा! असली भक्त तो सबकुछ भगवान पर छोड़ देता है। वह क्या कहता है, "भगवान, मुझे क्या? भगवान आपकी ही लाज जा रही है।" ऐसी भक्ति मिलना मुश्किल है।

आप जिसे बुद्धि समर्पित करते हो, उनकी सारी शक्तियाँ हममें प्रकट हो जाती हैं।

यह तो नई

समर्पण करने के बाद हमें कुछ करना नहीं पड़ता। हमारे यहाँ बच्चे ने जन्म लिया हो तो बच्चे को कुछ भी करना नहीं पड़ता, इस तरह समर्पण करने के बाद हमें कुछ भी करना नहीं पड़ता।

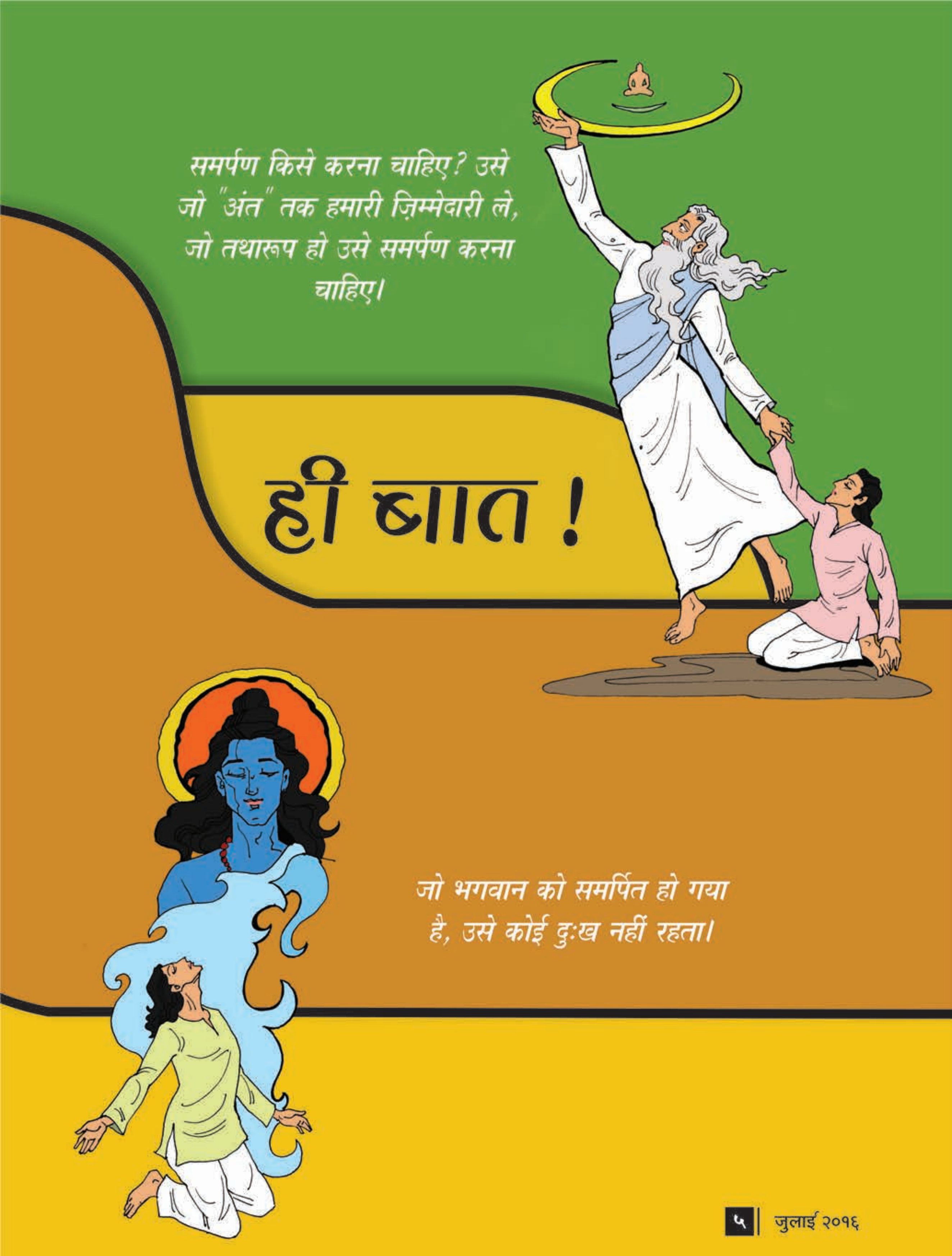
समर्पण किसे करना चाहिए? उसे जो "अंत" तक हमारी ज़िम्मेदारी ले, जो तथारूप हो उसे समर्पण करना चाहिए।
ही बात !
जो भगवान को समर्पित हो गया है, उसे कोई दुःख नहीं रहता।

सीता जी के पिता राजा जनक को सच्चा ज्ञान प्राप्त करने की तीव्र लालसा थी। राजा ने अपने दरबार में महात्माओं, ऋषियों और विद्वानों को आमंत्रित किया।

राजा जनक ने दरबार में उपस्थित महानुभावों से प्रश्न किया कि, "मुझे आत्मज्ञान का स्वाद कौन चखा सकता है?"

सभी मौन रहे। अचानक एक ऋषि ने दरबार में प्रवेश किया। ऋषि का शरीर बिल्कुल बेडौल था। उन्हें देखकर पूरी सभा उनके ऊपर हँसने लगी।

ऋषि बोले, "यदि सचमुच यह विद्वानों की सभा होती तो मेरे बाहरी रूप पर किसी ने ध्यान नहीं दिया होता।"

जनक राजा का समर्पण

"मुझे आत्मज्ञान का स्वाद कौन चखा सकता है?"

ऋषि ने आदेश दिया, "तो राजन, आप अब सिंहासन छोड़कर नीचे आ जाइए और जाकर जूतों के पास बैठ जाइए।"

राजा जनक को लगा कि ये कोई साधारण ऋषि नहीं हैं। उनका नाम था अष्टावक्र यानी जिनके आठ अंग टेढ़े हों।

राजा ने ऋषि से आत्मज्ञान प्रदान करने के लिए विनती की।

अष्टावक्र ऋषि ने राजा जनक से पूछा, "राजन! पहले यह तय करो कि क्या आप सचमुच आत्मज्ञान की इच्छा रखते हैं?"

राजा ने जवाब दिया, "मेरे मन में कोई शंका नहीं है। सच्चे हृदय से मैं आत्मज्ञान का अनुभव चाहता हूँ।"

ऋषि राजा की परीक्षा ले रहे थे, "क्या आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिए आप कोई भी कीमत चुकाने के लिए तैयार हैं?"

राजा ने जवाब दिया, "हाँ, आप जो माँगेंगे वह देने के लिए तैयार हूँ।"

ऋषि ने पूछा, "शांति से सोचकर मुझे इस प्रश्न का जवाब दीजिए कि, क्या आप मुझे अपना तन, मन और धन समर्पित कर सकते हैं?"

राजा ने तुरंत जवाब दिया, "हाँ, ज़रूर। मैं खुशी-खुशी अपना तन, मन और धन आपको समर्पित करने के लिए तैयार हूँ।"

राजा की प्रबल इच्छा देखकर ऋषि प्रसन्न हो गए।

ऋषि ने आदेश दिया, "तो राजन, आप अब सिंहासन छोड़कर नीचे आ जाइए और जाकर जूतों के पास बैठ जाइए।"

यह सुनकर राजा को झटका लगा। लेकिन उसी समय उन्हें भान हुआ कि उन्होंने तो अपना सबकुछ समर्पित कर दिया है तो फिर उनको खुद का मान रखने का प्रश्न ही कहाँ रहा?

तुरंत ही वे सिंहासन छोड़कर जूतों के पास जाकर बैठ गए। मान और प्रतिष्ठा, आध्यात्म मार्ग में बाधक होते हैं। राजा का मान खत्म करने के लिए ऋषि ने राजा को ऐसा आदेश दिया था।

ऋषि ने राजा को सावधान किया, "राजन, आपने अपना मन भी मुझे समर्पित कर दिया है। इसलिए ये संपति के विचार छोड़ दीजिए। उन पर अब मेरा अधिकार है।" उस समय राजा धन-संपति, राज्य और परिवार के बारे में सोच रहे थे। ऋषि की आज्ञा के अनुसार राजा ने सभी सांसारिक चीज़ों में से ध्यान वापस वास्तव में खींचकर स्वयं के भीतर लगा दिया।

इस तरह राजा ने अष्टावक्र ऋषि को सर्वस्व समर्पण करके, उनका आशीर्वाद प्राप्त किया। ऋषि की एक कृपा दृष्टि से राजा ने दिव्य आनंद की अनुभूति की। आत्मा का वास्तविक सुख चखा।

अष्टावक्र ऋषि ने ऐसा कहकर राजा से विदा ली कि, "हे राजन, मैं आपको आपका तन, मन और धन वापस लौटा रहा हूँ। मेरी तरफ से इनका ध्यान रखना।"

और इस तरह राजा जनक ने सर्वस्व समर्पण करके, सर्वस्व प्राप्त किया।

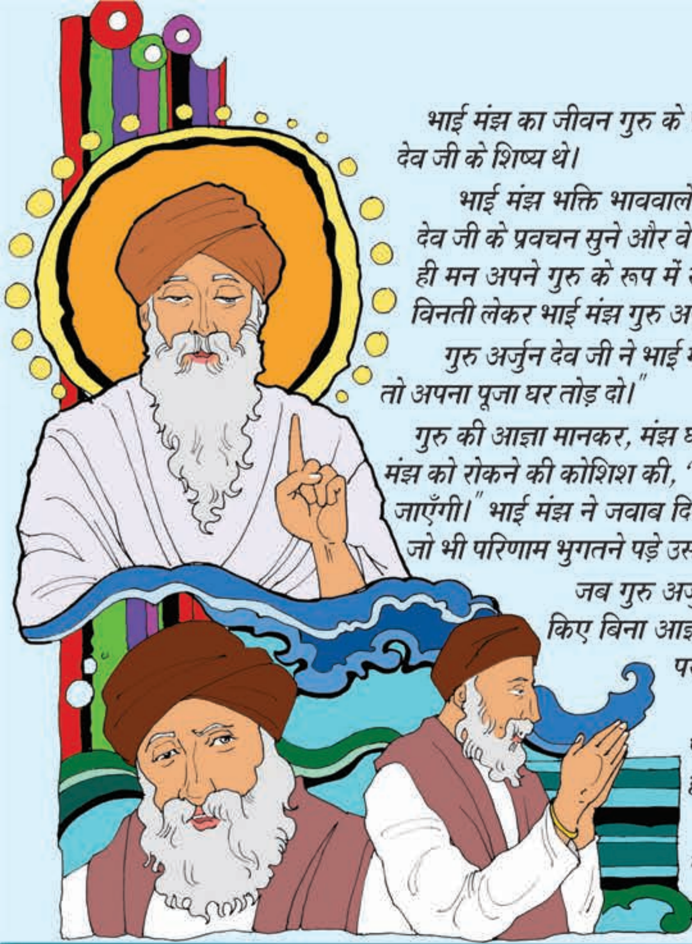

भाई मंझ का जीवन गुरु के प्रति समर्पण का एक श्रेष्ठ उदाहरण है। वे सिक्ख गुरु अर्जुन देव जी के शिष्य थे।

भाई मंझ भक्ति भाववाले एक संपन्न ज़मीनदार थे। एक दिन भाई मंझ ने गुरु अर्जुन देव जी के प्रवचन सुने और वे उनसे बहुत प्रभावित हुए। भाई मंझ ने अर्जुन देव जी को मन ही मन अपने गुरु के रूप में स्वीकार कर लिया। खुद को शिष्य रुप में स्वीकार करने की विनती लेकर भाई मंझ गुरु अर्जुन देव जी के पास गए।

गुरु अर्जुन देव जी ने भाई मंझ की परीक्षा लेने के लिए कहा, "मेरे शिष्य बनना चाहते हो तो अपना पूजा घर तोड़ दो।"

गुरु की आज्ञा मानकर, मंझ घर जाकर पूजाघर तोड़ने लगे। यह देखकर उनके हितैषियों ने मंझ को रोकने की कोशिश की, "भाई मंझ, ऐसा करने से तुम्हारे परिवार पर घोर मुसीबतें आ जाएँगी।" भाई मंझ ने जवाब दिया, "यह मेरे गुरु की आज्ञा है। उसका पालन करने से, मुझे जो भी परिणाम भुगतने पड़े उसके लिए मैं तैयार हूँ।"

जब गुरु अर्जुन देव जी को पता चला कि भाई मंझ ने बिल्कुल भी शंका किए बिना आज्ञा का पालन किया है तब वे बहुत प्रसन्न हुए और भाई मंझ पर कृपा बरसाई।

कुछ ही समय में, भाई मंझ पर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा। उनके घोड़े की मृत्यु हो गई, घर में चोरी और तोड़फोड़ हो गई।

एक संपन्न ज़मीनदार से वे एक गरीब कर्ज़दार बन गए। गाँव के लोग भाई मंझ को ताना मारने लगे, "देखो, आपके कुकृत्य का परिणाम, पूजाघर तोड़ने का यह परिणाम

जोखिमदारी किसकी?

आया है।"

लेकिन गाँव के लोगों की बातों का भाई मंझ पर असर नहीं पड़ा। मुश्किल समय में उनकी गुरु भक्ति और श्रद्धा बिल्कुल भी नहीं डगमगाई।

आजीविका की खोज में भाई मंझ अपनी पत्नी और बच्चों को लेकर दूसरे गाँव गए। कई महीने बीत गए। एक दिन गुरु अर्जुन देव जी ने अपने एक शिष्य के साथ भाई मंझ के लिए एक पत्र भेजा और साथ में यह सूचना भी दी कि, "यदि भाई मंझ २० रुपए दें तो ही यह पत्र उनके हाथ में देना।"

गुरु का पत्र देखकर भाई मंझ बहुत खुश हो गए, लेकिन २० रुपए की व्यवस्था कैसे की जाए? उनकी ज़बरदस्त परीक्षा देखकर, उनकी पत्नी ने कहा, "चिंता मत करो, गहने बेचकर २० रुपए मिल जाएँगे।" सुनार ने गहने के ठीक २० रुपए दिए, जिन्हें शिष्य के हाथ में देकर, भाई मंझ ने गुरु का पत्र स्वीकार किया। भाई मंझ ने पत्र को चूम लिया और हृदय से लगाकर विरह में बहुत रोए।

कुछ समय बाद गुरु ने मंझ को आश्रम आने के लिए संदेश भेजा। मंझ की खुशी का पार न रहा ज़रा सी भी देर किए बिना, वे अपनी पत्नी और पुत्री को लेकर आश्रम पहुँच गए। आश्रम में उन्हें

बर्तन साफ करने की और रसोई के लिए लकड़ी काटकर लाने की सेवा दी गई। जैसे एक मूर्तिकार मूर्ति को कील से गढ़ रहा हो, इस तरह गुरु अर्जुन देव जी भी अपने शिष्य को गढ़ रहे थे। लेकिन मज़े की बात यह थी भाई मंझ का गुरु के प्रति समर्पण इतना अद्‌भुत था कि, गुरु से जो भी थपकी पड़ती, वो खुद के हित के लिए ही है ऐसा समझकर, वे कभी गुरु से भेद नहीं पड़ने देते थे।

जब गुरु अर्जुन देव जी को पता चला कि, भाई मंझ और उनका परिवार आश्रम की भोजनशाला में खाना खाते हैं तब भाई मंझ की परीक्षा लेने के लिए गुरु जी ने भाई मंझ से कहलवाया कि, "सेवा के बदले में खाना खाते हो तो यह सच्ची सेवा नहीं कही जाएगी।"

गुरु की बात दिल से स्वीकार करके मंझ ने अपने परिवार के लिए भोजन की दूसरी व्यवस्था की। पूरे दिन की सेवा के बाद, परिवार के भोजन के लिए वे मज़दूरी करके पैसे कमाने लगे।

एक शाम, जब भाई मंझ आश्रम की रसोई के लिए लकड़ी काटकर वापस लौट रहे थे, तब बहुत ही ज़ोर से आँधी आई। आँधी की वजह से भाई मंझ कुँए में गिर गए।

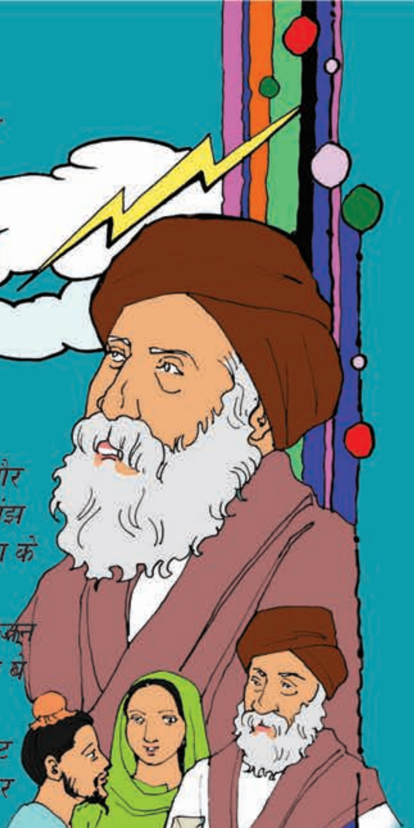

गुरु अर्जुन देव जी को अपने शिष्य की तकलीफ का अंदाजा हो गया। उन्होंने रस्सी और पटा मंगवाया और दूसरे शिष्यों के साथ कुँए के पास पहुँचे।

"इस पटे को रस्सी से बाँधकर कुँए में लटकाओ और भाई मंझ को ऊपर खींच लो", गुरु ने शिष्य को निर्देश दिया और धीरे से कान में कुछ कहा।

गुरु के कथन अनुसार शिष्य ने भाई मंझ से ऊँची आवाज़ में कहा, "मैं तुम्हारे लिए रस्सी फेंक रहा हूँ। इसे पकड़कर ऊपर आ जाओ। लेकिन, भाई अपनी हालत तो देखो! ऐसे क्रूर गुरु का अनुसरण क्यों कर रहे हो? उन्हें छोड़ क्यों नहीं देते?"

गुरु के लिए एक भी उल्टा शब्द सुनना भाई मंझ को मंजूर नहीं था, "मेरे गुरु को क्रूर कहने की तुम्हारी हिंमत कैसे हुई! मेरे गुरु मेरे सर्वस्व हैं, मेरे समक्ष फिर कभी ऐसे अपमानजनक शब्द मेरे गुरु के लिए नहीं बोलना।"

शिष्य ने भाई मंझ को कुँए से बाहर निकाला। गुरु को सामने देखकर भाइमंझ गद्‌गद्‌ हो गए।

गुरु ने कहा, "भाई मंझ, मैं तुमसे बहुत खुश हूँ। परीक्षा के समय तुम्हारी श्रद्धा और समर्पण में ज़रा भी कमी नहीं आई। तुम जो वरदान माँगो वह मैं देने के लिए तैयार हूँ।"

भाई मंझ की आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगी। गुरु के चरण पकड़कर भाई मंझ ने कहा, "मैं क्या वरदान माँगु प्रभु? आपसे ज्यादा प्रिय मुझे इस जगत् में दूसरा कोई नहीं है।"

और इस तरह कठिन समय में गुरु ने अपने शिष्य का रक्षण किया और कठिनाई से बाहर निकाला। खुद के अद्‌भुत समर्पण भाव की वजह से भाई मंझ गुरु अर्जुन देव जी के कृपा-पात्र बन गए। गुरु से शक्तियाँ लेकर उन्होंने लोक-कल्याण का बहुत बड़ा काम किया।

समर्पण से रक्षण

प्राचीन समय में बेबीलोन में डेनियल नामक एक व्यक्ति ईश्वर पर बहुत श्रद्धा रखता था। डेनियल ने अपनी प्रमाणिकता और कुशलता से उस समय के राजा डेरियस का दिल जीत लिया था।

राजा डेरियस, डेनियल को अपना मित्र मानते थे। डेनियल की कुशलता देखकर, राजा ने उन्हें देश का उच्च अधिकारी बना दिया। राजा के अन्य अधिकारियों को डेनियल से ईर्ष्या हुई। वे डेनियल को नीचा दिखाने की कोशिश में रहने लगे लेकिन डेनियल की ईश्वर भक्ति हमेशा उसका रक्षण करती और अधिकारियों की कोशिशें बेकार हो जाती।

अंततः एक अधिकारी को एक युक्ति सूझी। उसने अन्य अधिकारियों से कहा, "हम कोई ऐसी तरकीब न ढूँढ निकालें, जिससे राजा डेनियल को बाहर निकाल दें। अब एक ही रास्ता है यदि डेनियल राजा के हुक्म का अनादर करे तो राजा उसे ज़रूर निकाल देंगे।"

दूसरे अधिकारी ने कहा, "लेकिन ऐसा किस तरह करवाएँ?"

"यदि राजा उसके ईश्वर के विरुद्ध कानून बनाए तो..." अधिकारी ने अपनी युक्ति बताई। एक-दूसरे को देखकर वे हँसे और राजा के पास पहुँचे।

राजा डेरियस बहुत ही मानी थे। उनका मान रहे इस तरह अधिकारियों ने राजा से कहा, "हे महान राजा, आप इतने समर्थ हैं कि आपके सिवाय, राज्य में किसी अन्य की भक्ति करनी ही नहीं चाहिए।"

यह सुनकर राजा खुश हो गए।

"जो व्यक्ति आपके सिवाय किसी अन्य की भक्ति करता हो तो उसे सिंह की गुफा में धकेल देना चाहिए।" अधिकारियों ने राजा की खुशी को बढ़ावा दिया।

"बिल्कुल सही कहा", अन्य अधिकारियों ने समर्थन किया, "सच कहूँ तो राजा जी, प्रजा इस बात को स्वीकारे, इसके लिए आपको कानून बनाकर राज्य में घोषणा कर देनी चाहिए।"

अपनी ऐसी प्रशंसा सुनकर राजा उत्साह में आ गए और भावावेश में आकर इस कानून पर मोहर लगा दी। इस कानून के बारे में डेनियल को नहीं बताया गया।

कानून के बारे में पता लगने पर भी डेनियल ने अपने नित्यक्रम के अनुसार ईश्वर की प्रार्थना जारी रखी।

एक दिन अधिकारियों ने डेनियल को प्रार्थना करते हुए पकड़ लिया और राजा के पास ले गए।

"डेनियल ने आपके आदेश की अवहेलना की है। दिन में तीन बार यह अपने ईश्वर को झुककर प्रार्थना करता है। नियम का उल्लंघन करने के बदले, डेनियल को सजा होनी चाहिए", अधिकारियों ने राजा से निवेदन किया।

यह सुनकर राजा डेरियस निराश हो गए। डेनियल तो उन्हें बहुत ही प्रिय था। डेनियल को सिंहों की गुफा में न फैंका जाए, इसलिए राजा ने कानून बदलने का सोचा लेकिन अधिकारियों ने विरोध किया, "मोहर लगे हुए कानून का पालन तो होना ही चाहिए", ऐसा कहकर उन्होंने राजा को डेनियल की सजा के लिए सहमत किया।

सिपाहियों ने डेनियल को सिंहों की गुफा में धकेल दिया।

पूरी रात राजा ने बैचेनी में निकाली। डेनियल की चिंता में वे एक क्षण भी सो नहीं पाए।

सूर्योदय होते ही राजा सिपाहियों को लेकर गुफा के पास आए। डेनियल जवाब देगा या नहीं! यह सोचकर, भारी हृदय से राजा ने गुफा के पास जाकर पूछा, "डेनियल, क्या तुम्हारे ईश्वर ने तुम्हारी रक्षा की?"

थोड़ी देर शांति रही और फिर डेनियल का जवाब आया, "हे राजन! मेरे ईश्वर ने मेरी रक्षा की। उनकी कृपा से सिंहों ने मुझे बिल्कुल भी नुकसान नहीं पहुँचाया।"

डेनियल ईश्वर का आश्रित था और इसीलिए उसकी आवाज़ में निर्भयता थी। जो भगवान को सच्चे दिल से समर्पित होता है, उसे किसी भी तरह का भय कहाँ से होगा!

डेनियल की आवाज़ सुनकर राजा खुशी से उछल पड़े। डेनियल को बाहर निकालने का आदेश दिया। जब सिपाही गुफा के अंदर डेनियल को लेने गए तो उन्होंने देखा, "सिंह अपना हिंसक भाव भूलकर शांति से बैठे थे।

राजा को अपनी भूल समझ में आ गई। उस दिन उन्होंने घोषणा की, "डेनियल के ईश्वर महान हैं। उनकी महानता स्वीकार करके, हम सब उनकी भक्ति करेंगे!"

तो देखा मित्रों, सच्चे दिल से समर्पण का पावर कितना अद्भुत होता है। डेनियल सच्चा भक्त था और इसीलिए भगवान पर सब छोड़कर, हिंसक सिंहों के बीच भी निर्भय रह सका।

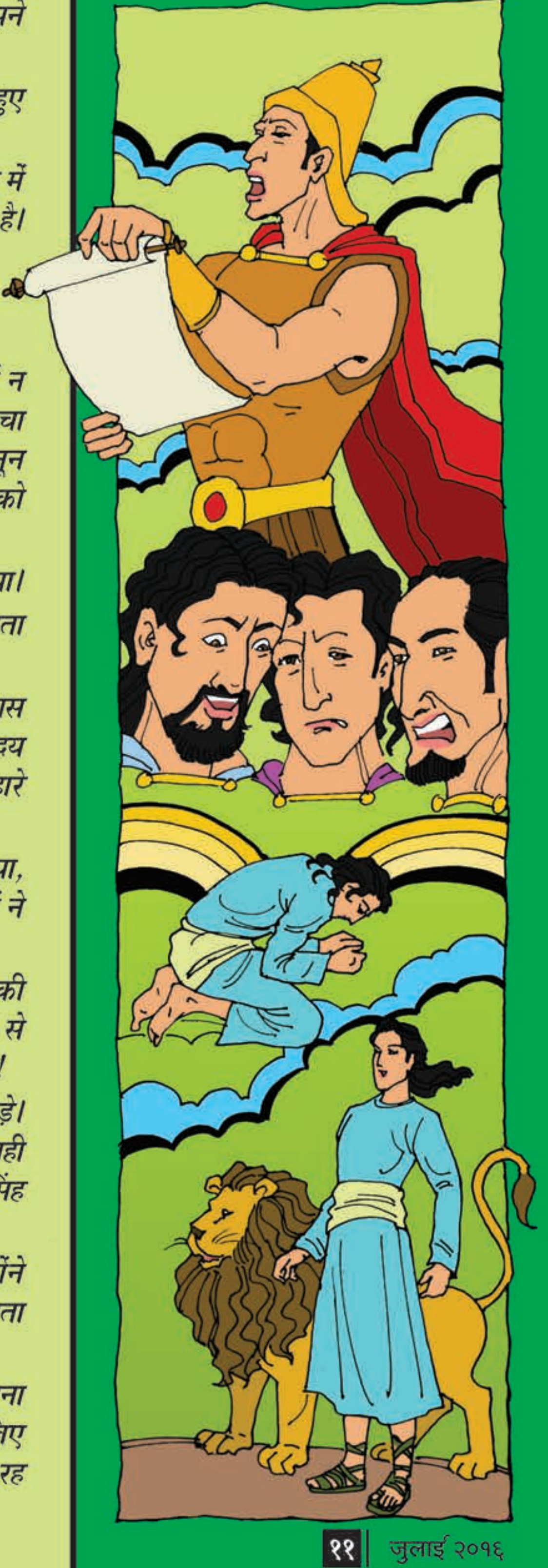

विभिन्न जगहों पर आयोजित समर कैम्प की एक झलक...

सीमंधर सिटी

राजकोट

राजकोट

"मानव से महामानव" हिन्दी नॉवल बुक का ओपनिंग करते हुए पूज्यश्री

ईश्वर की कृपा

एक समय की बात है, एक गाँव में एक वृद्ध किसान अपने इकलौते बेटे के साथ रहता था।
उनके पास जमीन का एक टुकड़ा, एक गाय और एक घोड़ा था। उससे ही वे अपना गुज़ारा करते थे।
एक बार उनका घोड़ा भाग गया। दोनों बाप-बेटे घोड़े को ढूँढने के लिए बहुत घूमे, लेकिन घोड़ा नहीं मिला।
गाँव के लोग किसान को आश्वासन देने लगे।
भगवान आप पर बहुत क्रूर हो गए हैं। कितना बुरा हो गया।
यह उनकी कृपा भी हो सकती है। किसान ने शांति से जवाब दिया।
दो दिन के बाद घोड़ा वापस आ गया। उसके पीछे-पीछे अन्य चार सुंदर और मजबूत घोड़े आ गए। किसान को तो पाँच घोड़े मिल गए।

यह तो अद्‌भुत कहा जाएगा। आप तो बहुत नसीबवाले हो।
यह भी भगवान की ही कृपा कही जाएगी।
दूसरे दिन किसान का बेटा, जंगली घोड़े को परखने के लिए उस पर सवार हो गया, लेकिन वह नीचे गिर गया और उसका पैर टूट गया।
यह घोड़ा आपके लिए बहुत खराब नसीब लेकर आया है। इसके आते ही आपके बेटे का पैर टूट गया।
इसमें भी भगवान की कृपा होनी चाहिए।
थोड़े दिन बाद, राजा के सैनिक गाँव में घूम रहे थे। वे गाँव के युवकों को बलपूर्वक सेना में भर्ती करने के लिए ले गए।
१५ | जुलाई २०१६

देखा मित्रों, किसी भी परिणाम को ईश्वर की कृपा समझना, वह उनके प्रति समर्पण दिखाता है।

बुद्धि का समर्पण

एक दिन कबीर जी के भक्तों ने उनसे प्रश्न किया, "सच्चा शिष्य किसे कहते हैं?"

कबीर जी ने अपने शिष्य कमाल को बुलाया और कहा, "काम करते हुए मेरी कातने की चरखी कहीं गिर गई है। उसे ढूँढने के लिए एक दीपक ले आओ।"

दिन का समय था और भरपूर उजाला था। फिर भी एक भी सवाल किए बिना कमाल दीपक ले आया।

कबीर जी ने कहा, "कमाल, आज बहुत से भक्त भोजन के लिए यहाँ आएँगे। थोड़ी मिठाई तैयार करो और उसमें नमक डाल दो।" कमाल ने आदेश का ठीक से पालन किया।

भक्तों की तरफ देखकर कबीर जी ने कहा, "देखो, यदि कमाल अपनी बुद्धि का उपयोग करता तो क्या मेरे आदेश का पालन कर सकता था? कमाल ने अपनी बुद्धि मुझे समर्पित कर दी है और इसीलिए वह निष्ठापूर्वक, मेरे आदेशों का पालन कर सकता है।"

भक्तों को उनके प्रश्न का जवाब मिल गया कि सच्चा शिष्य वही कहा जाता है जो अपने सद्गुरु को बुद्धि समर्पित कर दे।

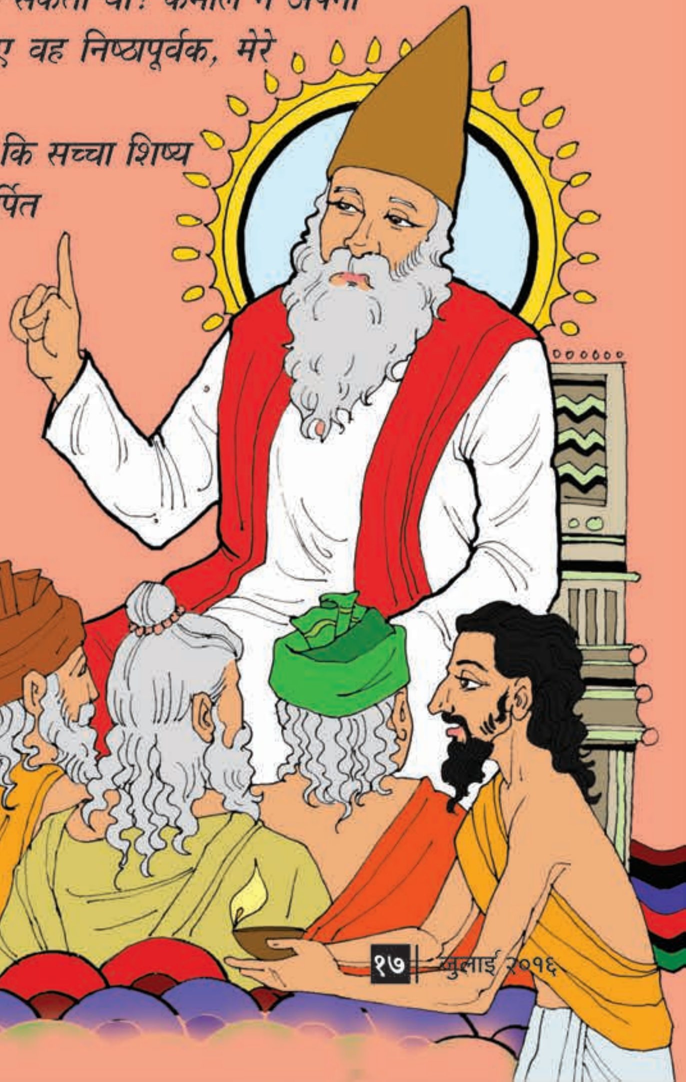

"दिन का समय था और भरपूर उजाला था। फिर भी एक भी सवाल किए बिना कमाल दीपक ले आया।"

चलो खेलें...

नीचे दिए गए चित्र में बिंदुओं
को जोड़कर चित्र पूर्ण करें।

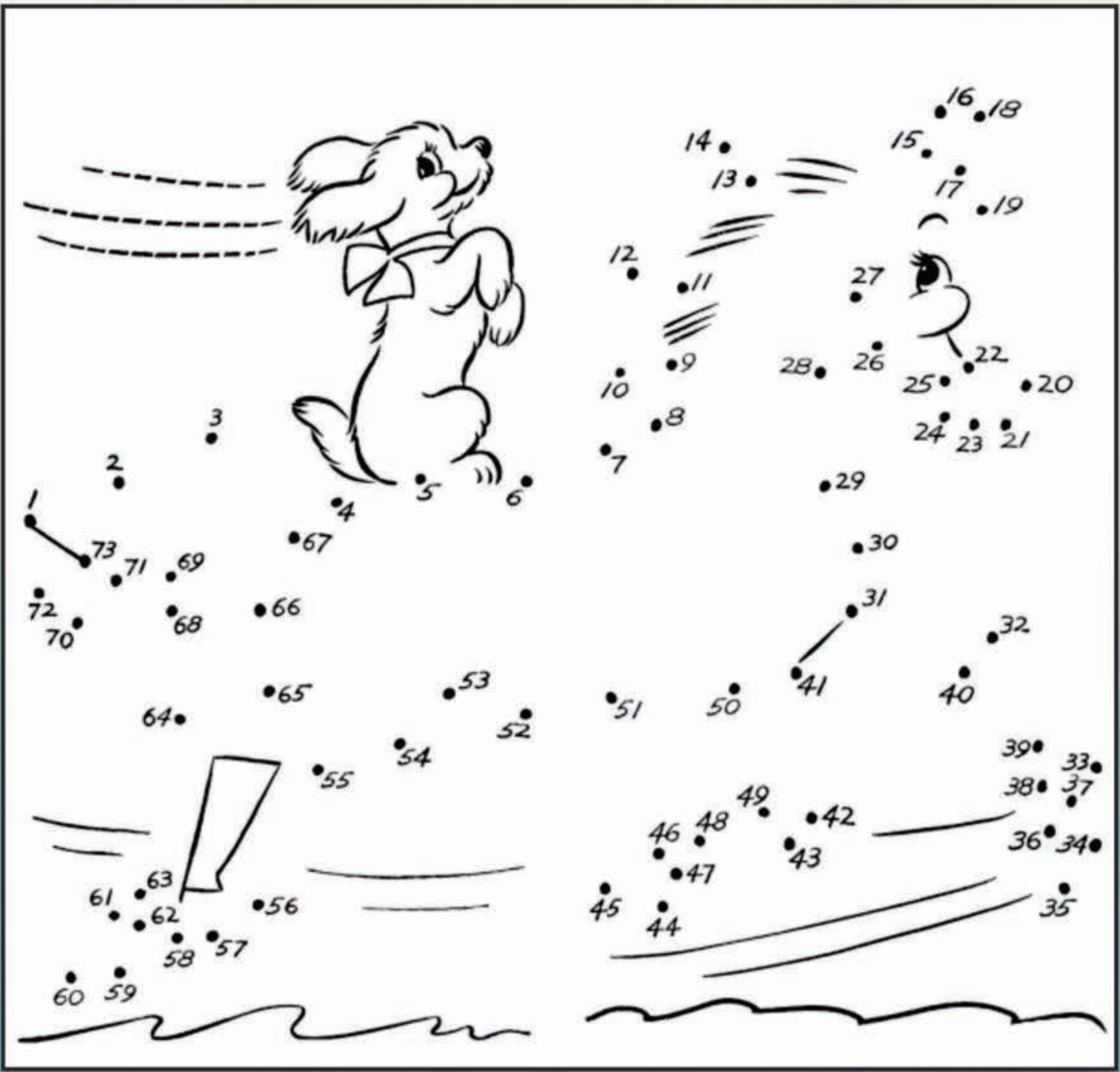

और अंत में...

श्री कृष्ण की बाँसुरी की एक सुंदर कहानी है। श्री कृष्ण हर रोज़ उपवन में जाते और हर एक पौधे से कहते, "मैं तुम सभी को बहुत प्यार करता हूँ।"

यह सुनकर सभी पौधे बहुत खुश हो जाते और प्रतिभाव में कहते, "हे कृष्ण, हम भी आपसे बहुत प्रेम करते हैं।"

एक दिन श्री कृष्ण उपवन में बाँस के पेड़ के पास गए। वे चिंतित दिख रहे थे। उन्हें चिंता में देखकर बाँस के पेड़ ने उनसे पूछा, "हे कृष्ण, आपको क्या हुआ? क्यों चिंतित हो?"

श्री कृष्ण ने कहा, "मैं तुमसे कुछ चाहता हूँ। क्या तुम मुझे दोगे?"

बाँस ने कहा, "ज़रूर, क्यों नहीं?"

कृष्ण ने कहा, "लेकिन यह देना बहुत मुश्किल है।"

बाँस ने कहा, "मुझे बताओ, यदि सँभव हुआ तो मैं आपको दूँगा।"

कृष्ण ने कहा, "मुझे तुम्हारा जीवन चाहिए। मुझे तुम्हें काटना है।"

बाँस ने थोड़ी देर सोचा और फिर पूछा, "क्या आपके पास दूसरा कोई विकल्प नहीं है?"

कृष्ण ने कहा, "नहीं, दूसरा कोई रास्ता नहीं है।"

बाँस ने कहा, "ठीक है।"

और उसने खुद को श्री कृष्ण को सौंप दिया। श्री कृष्ण ने बाँस को काटा, घिसा, आकार दिया, अंत में उसमें छेद किए। इस प्रत्येक प्रक्रिया में बाँस को बहुत पीड़ा हो रही थी। वह पीड़ा से रो उठा।

श्री कृष्ण ने उसमें से एक सुंदर बाँसुरी बनाई। वह बाँसुरी हमेशा उनके पास ही रहती, चौबीस घंटे।

बाँसुरी को देखकर गोपियों को भी उससे ईर्ष्या होती।

एक बार उन्होंने बाँसुरी से पूछा, "कृष्ण तो हमारे भगवान हैं, फिर भी हमें उनके साथ थोड़े ही समय के लिए रहने को मिलता है। जबकि तुम पूरा दिन उनके साथ ही रहती हो। वे तुम्हारे साथ जागते हैं, तुम्हारे साथ सोते हैं, जहाँ देखो वहाँ तुम उनके साथ ही होती हो तो इसका रहस्य क्या है कि भगवान को तुम इतनी ज्यादा प्रिय हो?"

बाँसुरी ने मुस्कुराकर जवाब दिया, "रहस्य इतना ही है कि, मैंने खुद

Akram Express

July2016
Year : 4, Issue : 4
Conti. Issue No.: 40

BALVIGNAN
Fun 'n' Gnan with Dada

Date of Publication On 8th Of Every Month
RNI No.GUJHIN/2013/53111
Postal Reg. No. G- GNR-306/14-16
valid up To 31-12-2016
LPWP Licence No. CPMG/GJ/119/2014
valid up To 31-12-2016
Posted at Adalaj Post Office
on 08th of every month

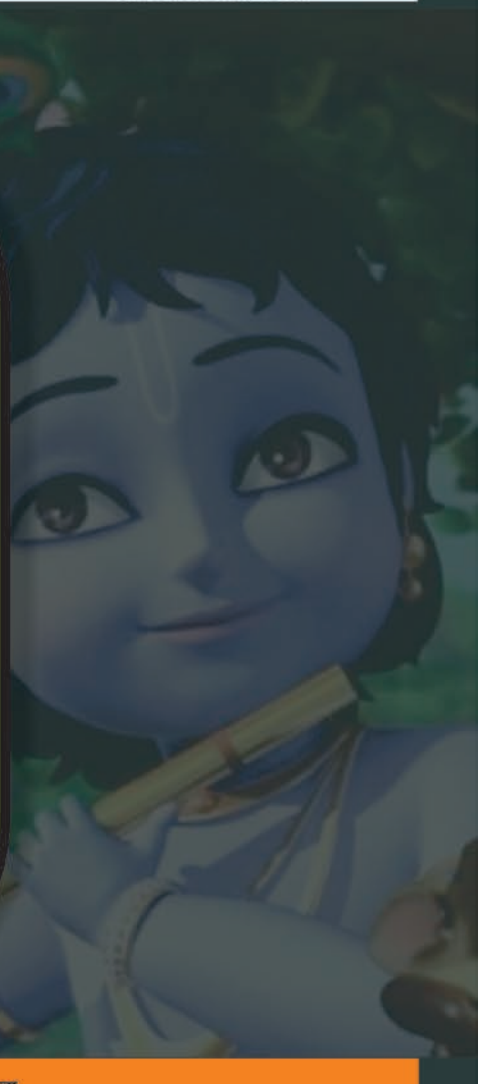

को उन्हें सौंप दिया है। खुद को सौंपने के बाद उन्हें मेरे लिए जो योग्य था, वही मेरे साथ किया। इस प्रक्रिया में मुझे बहुत पीड़ा से गुज़रना पड़ा। लेकिन एक बार खुद को सौंपा यानी फिर मुझे यह देखने की चाह ही नहीं हुई कि वे मेरे साथ ऐसा क्यों कर रहे हैं? वे मेरे साथ जब, जैसा, जिस तरह भी करना हो वह करें। वे जो करेंगे वह संपूर्ण मेरे लिए कल्याण रूप ही होगा इसका मुझे विश्वास था। यह उसी श्रद्धा का फल है कि आज मैं हमेशा उनके पास ही होती हूँ।"

इसे कहते हैं समर्पण!

अक्रम एक्सप्रेस के सदस्यों के लिए सूचना

१. आपकी वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है उसका पता कैसे चलेगा? यदि आपकी इस महीने में आई हुई अक्रम एक्सप्रेस के कवर के लेबल पर लगे हुए मेम्बरशीप नं. के बाद **#** हो तो यह आपकी अंतिम अक्रम एक्सप्रेस है। उदा. **AGIA4313#** और यदि लेबल पर मेम्बरशीप नं. के बाद **##** हो तो अगले महीने में आपकी सदस्यता समाप्त होगी। उदा. **AGIA4313##** अक्रम एक्सप्रेस रिन्यूअल की जानकारी संपादकीय पेज पर दी गई है।

२. यदि किसी महीने का अक्रम एक्सप्रेस आपको नहीं मिला हो तो नीचे दी गई माहिती फोन नं. ८९५५००७५०० पर **SMS** करें।

१. कच्ची पावती नंबर या **ID No.**, २. पूरा ऐड्रेस पिन कोड के साथ, ३. जिस महीने का मैगज़ीन नहीं मिला हो, उस महीने का नाम।

Publisher, Printer & Editor - Mr. Dimplebhai Mehta on behaif of Mahavideh Foundation
Printed at **Amba offset** :- Parshwanath Chembers, Usmanpura, Ahmedabad - 14 and published